धर्मआधृत विधि : व्याख्या की समस्या

डॉ. ज़रफिशॉ ज़ैदी
सहायक आचार्य–दर्शनशास्त्र,
राजकीय महाविद्यालय अजमेर

कानुन जब भाषा में अभिव्यक्त होता है, एक मानक के रूप में स्थापित किया जाता है तो कुछ सामान्य पदों व सम्प्रत्यया अभिव्यक्त होता है जिसके अर्थ को सदैव स्पष्टीकरण की अपेक्षा रहती है। इसलिए निर्वचन की यह समस्या केवल उन्हीं कानूनों के बारे में नहीं होती जो धर्म आधृत होते हैं बल्कि किसी भी लिखित शास्त्र या पुस्तक में यह समस्या उठ सकती है। इस रूप में निर्वचन की समस्या कुरान पर आधारित इस्लामी विधि में उतनी ही है जितनी कि संवैधानिक कानूनों में दिखाई देती है।

इस्लामी चिंतन में क़ानून की व्याख्या के दो स्तर रहे हैं–एक भाषायी अर्थ का स्तर और दूसरा उसमें निहित मूल्यमीमांसीय वैचारिक स्तर । भाषायी स्तर पर व्याख्या का सम्बन्ध मूल ग्रन्थ की भाषा के अर्थ से रहा है और वैचारिक स्तर पर व्याख्या का सम्बन्ध कानून के रचयिता की इच्छा या कि उसके प्रयोजन से रहा है। इस्लामी विधि के इतिहास में मध्यकाल तक आते आते दैवीय आदेशों के क़ानूनी पक्षों की भाषायी व्याख्या को अधिक महत्त्व दिया जाने लगा और आज इन्हीं व्याख्याओं पर आधारित क़ानूनी ग्रन्थों को मुस्लिम न्याय शासकीय व्यवस्था में प्रमुख स्थान प्राप्त है, जिसकी वजह से कुछ प्रचलित इस्लामी कानूनों के अर्थ और उन कानूनों के रचयिता के वास्तविक प्रयोजन या इच्छा में साम्यता दिखाई नहीं देती।[1] सऊदी अरब के शासक फहद की सौ से अधिक विवाहित और तलाक़ शुदा पत्नियाँ हैं। लेकिन हमें लगता है कि इस्लामी कानूनों के रचयिता आदिल (न्यायप्रिय) अल्लाह की यह मंशा नहीं हो सकती कि उसके

बनाए क़ानूनों से सैकड़ों महिलाओं के साथ अन्याय हो। इसलिए कहीं न कहीं मनुष्य ने ही इन कानूनों को समझने और लागू करने में गलतियां की है। इन गलतियों का दूर करने के लिए विधिवेत्ताओं द्वारा इस्लामी क़ानूनों की नये सिरे से वैचारिक व्याख्या प्रस्तुत की जाने की आवश्यकता है। वैसे इस्लामी विधि की व्याख्या की परम्परागत आठ विचार पद्धतियाँ पहले से ही प्रचलित है जो विश्व के विभिन्न देशों में रहने वाले मुस्लिम समाज के अनुयायियों के आचरण को अपने अपने तरीके से निर्देशित कर रही है, जिन पर हम प्रथम अध्याय में विस्तारपूर्वक चर्चा कर चुके हैं। इस्लामी विधि चिंतन में इन आठ विचार पद्धतियों की उपस्थिति से इस्लामी विधि की व्याख्या के सम्बन्ध में कुछ मूल बातें कहीं जा सकती है। एक तो यह है कि कुरान में वर्णित इस्लामी क़ानूनों के अनेक अर्थ निकलते हैं जिसकी वजह से कुरान की तफ़सीर (व्याख्या) की जाने की आवश्यकता को मद्देनजर रखते हुए आठों विचार पद्धतियों ने अलग अलग व्याख्याएँ प्रस्तुत की। दूसरे, व्याख्याकारों के दृष्टिकोण और विचारधारा ने कुरान की व्याख्याओं को प्रभावित किया।[2] तीसरे, इस्लामी विधि की व्याख्याएँ भौगोलिक क्षेत्र (जिस क्षेत्र में उस विचार पद्धति का जन्म हुआ) की परम्परागत विधि से भी प्रभावित हुई।[3] चौथे,

ऐसा माना जाता है कि ये आठों विचार पद्धतियाँ मुस्लिम विधिशास्त्र के मूल सिद्धान्त को समान रूप से स्वीकार करते हुए अलग अलग दिशाओं में उन्मुख हुई है, पर फिर भी किन्हीं विषयों पर इनमें मत–मतान्तर आधारभूत दिखलाई देने लगता है।[4]

तब अंतिम रूप से हम यह कह सकते हैं कि इस्लामी विधि के परिप्रेक्ष्य में जब भौगोलिक क्षेत्रों की सामाजिक परिस्थितियों, मानवीय अपेक्षाओं और व्याख्याकारों के दृष्टिकोण एवम् विचारधारा के आधार पर कुरान प्रोक्त दैवी आदेशों को व्याख्यायित किया गया है और अलग–अलग ढंग से व्याख्यायित होते हुए भी वह स्वीकृत है और प्रचलित है तो भारत वर्ष में भी मुस्लिम समुदाय की परिस्थितियों और आवश्यकताओं को देखते हुए इस्लामी विधि को पुनर्व्याख्यायित किया जा सकता है लेकिन यह कार्य मुस्लिम समाज में श्रेष्ठ नैतिक चेतना वाले प्रबुद्ध विद्वानों द्वारा ही किया जाना चाहिए। इस संदर्भ में उल्लेखनीय प्रतीत होता है कि कई बार पुरातन विधि सिद्धान्तों की पुनर्व्याख्या की प्रक्रियान्तर्गत उनकी आकारिक संरचना या गुणवत्ता में इतना परिवर्तन हो जाता है कि वे नवीन विधि सिद्धान्तों के रूप में दिखाई देने लगते हैं और इन नवीन विधि सिद्धान्तों के द्वारा पुरातन विधि सिद्धान्तों को निरस्त मान लिया जाता है। परन्तु इस्लामी परम्परा में यह ध्यान देने योग्य बात है कि निरस्त कानून और निरसक कानून दोनों ही दैवी उद्घाटित होने चाहिए। उपर्युक्त सिद्धान्त के दायरे में रहते हुए इस्लामी परम्परा में निरसक क़ानून चार प्रकार से अस्तित्व में आए हैं–(1) एक कुरानी आयत

द्वारा दूसरी कुरानी आयत निरस्त हुई है (2) एक हदीस ने दूसरी हदीस को निरस्त किया है (3) एक हदीस ने कुरानी आयत को निरस्त किया है (4) एक कुरानी आयत द्वारा हदीस निरस्त की गई है।

प्रथम, एक कुरानी आयत ने दूसरी कुरानी आयत को निरस्त कर दिया है। जैसे कि सुरतुल बकरा में आया कि जब व्यक्ति की मृत्यु का समय आये और वह अपने पीछे धन छोड़ रहा हो तो माता पिता और नातेदारों के लिए सामान्य नियम के अनुसार वसीयत करे परन्तु सुरतुन निसा में नातेदारों के हिस्से निश्चित कर दिए गए और अब नातेदारों के लिए वसीयत किया जाना मना हो गया था। कुरान, सुरतुन निसा में व्यभिचारिणी के लिए कमरे में बिना दानापानी के बंद रख कर मरने का दण्ड और व्यभिचारीर के लिए इच्छानुकूल दण्ड का विधान था किन्तु सुरतुन नूर में दोनों के लिए सौ कोडों का दण्ड प्रतिपादित करके उस आयत को निरस्त कर दिया। दूसरे एक हदीस ने दूसरी हदीस को निरस्त कर दिया है जैसे पैग़म्बर साहब ने पहले नातेदारों के समाधि स्थल पर न जाने का आदेश दिया था परन्तु बाद में दूसरे आदेश में जाने की आज्ञा दे दी। तीसरे, एक कुरानी आयत हदीस से निरस्त हो गई है जैसे कि कुरान की दाय भाग विषयक आयतों, सुरतुन् बकरा, सूरतुन्–निसा आदि को पैग़म्बर साहब ने मुस्लिम काफ़िर उत्तराधिकार और दास अदास उत्तराधिकार वर्जित कर निरस्त कर दिया। साथ ही साथ माता पिता और निकटतम सम्बन्धियों के दाय भाग के सम्बन्ध में वसीयत करने का अधिकार जो उक्त आयतों ने दिया था वह भी हदीस द्वारा निरस्त हो गया।

कुरान की सुरतुन् नूर में व्यभिचार के लिए 100 कोड़ों का दण्ड प्रतिपादित किया है, किन्तु पैग़म्बर साहब ने 100 कोड़ों का दण्ड कुमार कुमारी समागम तक सीमित कर दिया, उसमें एक वर्ष के निर्वासन का दण्ड जोड़ दिया और रज्म को विवाहित विवाहिता समागम के लिए विशिष्ट करदिया। चौथे, एक हदीस कुरानी आयत से निरस्त हो गई है। जैसे कि पैग़म्बर साहब ने मुसलमानों को यरूशलम की तरफ मुंह करके नमाज पढ़ने का आदेश दिया था, परन्तु बाद में करानी आयत प्रकाशित हुई कि काबे की तरफ मुँह करके नमाज़ पढ़ो।

शफ़ाई और मलीकी विद्वान उपर्युक्त पहली, दूसरी व चौथी संभावनाओं को स्वीकार करते हैं, परन्तु उनका मानना है कि हदीस का कोई आदेश कुरानी आयत को निरस्त नहीं कर सकता जबकि हनफी विद्वानों ने तीसरी संभावना को भी मान्यता दी है क्योंकि इस्लामी परम्परा में हदीसें भी अप्रत्यक्ष दैवी प्रकाशन मानी गई है। परन्तु इतना स्पष्ट है कि कुरान हदीस प्रसूत विधि आदेशों को इज्मा या कयास के माध्यम से निरस्त नहीं किया जा सकता है।

हमारे विचार में हदीसे कुछ कुरानी आयतों को स्पष्ट रूप से निरस्त नहीं करती वरन् कुछ अस्पष्ट एवम् अपूर्ण आयतों को स्पष्ट एवम् विस्तारित करते हुए उन्हें व्याख्यायित करने का प्रयास करती है जिसमें यदा कदा कुछ नवीन तत्त्वों का समावेश भी हो जाता है। फिर हदीसें स्वयं ही पैग़म्बर साहब के आचरण की व्याख्या का प्रस्तुतिकरण है। इस्लामी परम्परा में आचरण की व्याख्या को .... कहा जाता है। जिसके अन्तर्गत विशेष परिस्थितियों में व्यक्ति के कृत्यों, कथनों अथवा मौन स्वीकृतियों से उसकी इच्छा का ज्ञान प्राप्त किया जाता है जैसे कि पैग़म्बर साहब के जीवन काल में कोई रूढ़ि प्रचलित थी, परन्तु उन्होंने उस रूढ़ि के निषेध में कोई क़ानून नहीं बनाया तो माना गया कि उस रूढ़ि को पैग़म्बर साहब की स्वीकृति प्राप्त थी।

इस्लामी विधि के परिप्रेक्ष्य में व्याख्या की समस्या पर विचार करते हुए जो वस्तुस्थिति हमारे सामने आती है उसके आधार पर कहा जा सकता है कि प्रत्येक विधि व्यवस्था अपने मूल स्वरूप को देखते हुए निर्वचन के नियम प्रतिपादित करती है, हालांकि

उन नियमों को भी पुनः निर्वचन की भी अपेक्षा हो सकती है। जहाँ तक कानून का प्रश्न है, इसके नियमों के निर्वचन की कई कसौटियाँ भी हैं और उनकी अपनी सीमाएँ भी हैं। इस्लामी विधि के संदर्भ में पहली शर्त यह है कि कुरान के दैवीय आदेशों से विपरीत नहीं जाया जाये। दूसरे, कुरान के सभी आदेशों को आपस में तार्किक रूप से संगत बनाकर देखा जाए। तीसरे, जिस हद तक हदीसें विधि का स्रोत है, हदीसों और कुरान के आदेशों में सामंजस्य बनाया जाए। चौथे, इस निर्वचन के दौरान भाषा की दृष्टि से या भाषायी विन्यास की दृष्टि से समस्या खड़ी हो तो तार्किक रूप से उसे स्पष्ट करने और सुलझाने की कोशिश की जाए। पाँचवें, इनमें से कोई भी तरीका उपलब्ध न हो तो इज्मा के सिद्धान्त को देखा जाए और अंत में कोई नितान्त नवीन परिस्थिति जो किसी सुस्पष्ट कुरानी आयत या हदीस या इज्मा के सिद्धान्तों से आवृत्त न हो

तो उसे विवेक के माध्यम से सुलझाया जाये और विवेक क्या दिशा ले, इसके लिए उन मूल्यों के बारे में स्पष्ट होना पड़ेगा, जिनके लिए कानून तंत्र अस्तित्व में बने रहते हैं। इस रूप में कानून पर चर्चा करते हुए हम न्याय की अवधारणा पर पहुँचते हैं।

संदर्भ सूची

1ण जैसे कि मस्लिम पुरुष बहु–विवाह और तलाक विषयक कानूनों के सहारे अनेक पत्नियां रख सकते है।

2. जैसे कि कुरान में आयत आई कि जब पति पत्नी को तलाक दे तो पत्नी के लिए उचित व्यवस्था करे। कोये के काजी अबू हुरैरा (सन् 688–702 ई) ने इस आयत को व्याख्यायित करते हुए कहा कि यह प्रावधान पत्नियों के लिए आबन्धक है और उन्होंने पति द्वारा तीन दीनार मुआवजा पत्नियों को दिया जाना निश्चित कर दिया लेकिन सन 733 ई. में कीरो के काज़ी ताओबा–इब्ने–नामिर ने इस आयत को व्याख्यायित करते हुए कहा कि मुआवजा देना व्यक्ति के स्वविवेक पर निर्भर करता है और अगर पति मुआवजा देने से इंकार कर दें तो यह नियम उस पति पर बाध्यताकारी नहीं होगा।

3ण जैसे कि मदीना का मुस्लिम समाज अरबी कविलाई विधि के परम्परागत मापदण्डों से प्रभावित था जिसमें स्त्री को पुरुष के अधीन समझा जाता था इसलिए मदीना स्कूल (मलीकी विचार पद्धति) में स्वी विवाह संविदा में स्वतंत्र पक्षकार नहीं मानी गयी। उसके विवाह के लिए संरक्षकों की अनुमति आवश्यक है। दूसरे, इस विचार पद्धति में विवाहिता स्त्री अपनी सम्पत्ति की निरपेक्ष स्वामिनी नहीं होती और पति की अनुमति के बिना अपनी सम्पत्ति का विक्रय, दान आदि नहीं कर सकती जबकि दसरी ओर का ईराक) में स्त्रियों की दशा मदीना के परम्परागत समाज से अच्छी थी इसलिए कमा स्कूल (हनफी विचार पद्धति) में स्त्री विवाह संविदा में स्वतंत्र पक्षकार और अपनी सम्पत्ति की निरपेक्ष स्वामिनी मानी जाती है।

4. जैसे कि मोताज़िला विचार पद्धति में एक से अधिक स्त्रियों के साथ विवाह अवैध और न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना तलाक नहीं हो सकता जबकि अन्य विचार पद्धतियों में बहु–विवाह वैध है और तलाक देने के लिए न्यायिक प्रक्रिया अनिवार्य नहीं है। हनफी विधि में तीन बार तलाक शब्द उच्चारित करके विवाह विच्छेद किया जा सकता है परन्तु शिया विधि में यह अमान्य है। इनकी विधि में नषें या मजाक में उच्चारित तलाक वैध, जबकि अन्य विचार पद्धतियों में अवैध है। इम्बली और शफाई विधि में मानसिक रूप से विक्षिप्त व्यक्ति का विवाह निषिद्ध है, परन्त हनफी विधि में नहीं है। हनफी विधि में स्त्री किसी भी आधार पर विवाह विच्छेद प्राप्त नहीं कर सकती परन्तु हम्बली और शफ़ाई विधियों में विशेष आधार पर स्त्री विवाह विच्छेद प्राप्त कर सकती है।

.....